पुनर्स्थापन के प्रकृति एवं स्वरूप

किसी इतिहासकार ने ठीक ही कहा है कि 'पुनःस्थापन होकर भी भ्रान्त है" लेकिन 1660 के पुनःस्थापन में ऐसी बात नहीं है बहुत अंशों में यह पूर्ण रूप से पुनःस्थापन नहीं था जो इस प्रकार प्रमाणित किया है

1660 के पुनःस्थापन में दैवी सिद्धान्त का हनन किया गया था चुकि 17 वी शताब्दी में इंग्लैण्ड का यह प्रमुख सिद्धान्त था राजा की सारी शक्ति दैवी सिद्धान्त पर आधारित था जो पुनःस्थापन के बाद इसका हनन हुआ उसकी मान्यता जाती रही राजा की पुरानी शान शौकत पूर्णरूपेण नहीं लौट पाई. प्राचीन गौरव और महत्व नहीं रहा. स्टार चेम्बर, हाई कमीशन, कौंसिल ऑफ नोर्थ आदि विशेष न्यायालयों की स्थापना नहीं हुई चुकि इन्हीं न्यायालयों द्वारा राजा अपनी दमनात्मक नीति चलाता था

पार्लियामेंट की स्थिति परिवर्तन किया गया पहले की अपेक्षा पार्लियामेंट अधिक शक्तिशाली बन गया चुकि गृह युद्ध के पहले राजा ही प्रधान था और पार्लियामेंट उसके अधिनस्था एक संस्था मानी जाती थी लेकिन पुनःस्थापन के बाद पार्लियामेंट राज्य के प्रधान संस्था बन गई अब राजा का उसकी इच्छा के विरुद्ध विरोध करना कठिन हो

पुनःस्थापन के बाद एंग्लिकन चर्च शक्तिहीन एवं स्वतंत्रता हीन बन गया इसकी पुनः तो की गई लेकिन पुरानी शक्ति और स्वतंत्रा चली गई।

पुनःस्थापना एक समझौता था यह लिखा नहीं गया यह मौखिक था यह बात केवल परि में दिखाई गई थी हालांकि बाहर से तथा कानूनी दृष्टि से शासन का प्रधान राजा था लेकिन पुनःस्थापन के बाद वास्तविक प्रधान पार्लियामेंट हो गया।

वैधानिक समस्या समाधान पुनःस्थापना में नहीं किया गया था। यह न तो क्रान्ति न प्रतिक्रिया, बल्कि दोनों के बीच एक समझौता था 1603 से जो प्रश्न चला आ रहा था उसका समाधान 1660 में नहीं हो सका वैधानिक समस्या थी कि राजा

चार्ल्स I का निरंकुश शासन — अपने चार्ल्स ने प्रेस की स्वतंत्रता का अपहरण किया
(भाषण) प्रकाशन के विचार अभिव्यक्ति, भाषणों लेखन की स्वतंत्रता नहीं थी लेकिन चार्ल्स इस पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया। राजनीतिक क्षेत्र के विरोध लोगों को सजा देना शुरू किया शासकीय नीति के आलोचकों को कठोर सजा भुगतना पड़ी। विलियम लॉड की विशेष व्यवस्था की आलोचना करने के कारण प्राइन नामक वकील और बर्टन नामक डाक्टर को सजा दी गई थी लोगों को राजनीतिक तथा धार्मिक स्वतंत्रता नहीं थी इसलिए इस शासन को निरंकुश शासन का नाम दिया

अतः के निष्कर्ष के तौर पर कहा जाता है चार्ल्स I को 11 वर्षों तक संसद नहीं बुलाया और यह कहना कि वह तानाशाह था उस समय राजाने के लिए कोई नई बात नहीं क्योंकि हेनरी 8 के समय 12 वर्ष तक एलिजाबेथ के शासन में 18 वर्षों तक जेम्स के समय 7 वर्षों तक नहीं बुलाया जब चार्ल्स ने 1629 के व्यक्तिगत शासन करने का निर्णय लिया तो पाश्चात्य शासन के एकमात्र बल का प्रजातंत्र का भी अन्त निकट दिखने लगा स्वाभाविक रूप से लोगों की चिंता बढ़ी और उन्होंने व्यक्तिगत शासन को अत्याचारी और निरंकुश शासन का नाम दिया जो अनुचित नहीं है।

चार्ल्स ने अपनी आर्थिक दशा सुधारने के लिए शिप मनी कर लगाया था जबकि संसद ने इस कर को वसूलने पर प्रतिबन्ध लगा दिया था। इंग्लैंड के संविधान में यह वर्णित था कि यह कर तब वसूला जाय जब इंग्लैंड पर बाह्य आक्रमण का खतरा हो हालांकि 1634 ई. में यह कर लगाया था तब यह जायज था वह इसलिए कि उस समय देश पर बाहरी आक्रमण का भय था और समय बरबरी के खतरनाक डाकुओं का हमला हो रहा था। चार्ल्स ने इस हमले से समुद्रतट पर लोगों को बचाने के लिए यह कर लगाया था। चार्ल्स ने 1635 ई. में इस कर को पुनः लागू किया उस समय देश पर कोई खतरा नहीं था चार्ल्स ने तीसरी बार 1636 ई. में आन्तरिक पर भी लगा दिया तब इस कर का हैम्पडन नामक व्यापारी ने विरोध किया। तो उस पर मुकदमा चलाया और कहा गया कि "राजा ही कानून है न कि कानून राजा।

चार्ल्स ने अपने धार्मिक नीति के द्वारा धर्मान्धता के उद्देश्य से चार्ल्स I ने इंग्लैण्ड की जनता पर धार्मिक नीति थोपा एक ओर व्यापारी वर्ग, कुलीन वर्ग और आम उपभोक्ता चार्ल्स की धार्मिक नीति के खिलाफ थे वहीं उनका धार्मिक सलाहकार विलियम लॉड की धार्मिक नीति आम लोगों की धार्मिक सिद्धान्तों से भिन्न था वह प्यूरिटन का शत्रु था वह अपने अनुरूप इंग्लैंड की जनता को लाना चाहता था इस का उदाहरण जब जब अपनी धार्मिक नीति स्कॉटलैंड के बलपूर्वक थोपनी की कोशिश की तो स्कॉटलैंड में विद्रोह हुआ।

अपने पिता जेम्स की तरह चार्ल्स ने धन संग्रह के उद्देश्य से न्याय व्यवस्था में हस्तक्षेप किया। न्यायाधीशों पर दबाव डालकर अपनी इच्छा अनुसार निर्णय करवाता था और वही जो न्याय का निर्वाह करते थे उनको पदच्युत कर देता था। इस तरह न्याय व्यवस्था में हस्तक्षेप कर राजा ने प्रजा की स्वतंत्रता को खतरे में डाल दिया।

कि पार्लियामेंट इसको कभी तक कोई निश्चित समाधान नहीं निकल पाया था लोग राजा के अधिकारों को समाप्त कर शासन विधान के सभी अधिकार पार्लियामेंट को देना चाहते थे इस दृष्टिकोण से यह सम्पूर्णता कहा जा सकता है। इसकी विशेष बात यह थी कि यह निश्चित नहीं था राजा के अधिकारों और कार्यों पर कोई प्रतिबन्ध रही थी

चाहे जो भी हो पुनः स्था द्वारा स्थापित राजसत्ता क्षीण नहीं हुई यह बात सही है कि राजा की स्थिति पहले जैसी नहीं रह गया था इस कारण पुन को क्रान्ति भी माना जा सकता है।